कितना उचित है बच्चों को दण्ड देना ?

❑ नवल किशोर सोनी

शिक्षा जगत में हिंसा व क्रूरता को कोई स्थान नहीं है, परन्तु हाल ही में कुछ घटनाओं के बारे में जानकर दिमाग में सवाल पैदा हुआ कि कहीं हमारा शिक्षक समुदाय भी मानवीय संवेदनाओं पर आधारित शिक्षक-बालक संबंधों को ताक पर रखकर हिंसा व क्रूरता के रास्ते पर तो अग्रसर नहीं हो रहा है । कुछ समय पूर्व अखबार में छपी एक खबर ने दिल दहला दिया कि उचित ड्रेस पहन कर न आने की गलती पर शिक्षिका ने छात्रा की पिटाई की । धूप में खड़े रहने की सजा दी जिससे बाद में उसकी मृत्यु हो गई ।

उक्त घटना यह सोचने पर विवश करती है कि सभ्यता के इस युग में बालक-बालिकाओं को शालाओं में दण्ड देना कितना उचित है ? छोटी-मोटी गलती करने पर, आदेश न मानने पर, गृह कार्य समय पर न करने या समय पर शाला नहीं आने पर बच्चों की इतनी पिटाई की जाती है कि संवेदनशील बच्चों के मन में पढ़ाई अथवा विद्यालय का हौव्वा बैठ जाता है । उनका मनोबल गिरता है और वे सदैव के लिए विद्यालय से भयभीत होने लगते हैं । कुछ लोग मानकर चलते हैं कि बिना दण्ड या भय के बालकों में अपेक्षित सुधार असंभव है या उनमें अनुशासन विकसित नहीं हो सकता । परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि दण्ड से बालक सुधर ही जायेगा वरन इसका विपरीत ही प्रभाव पड़ता है । अपने साथियों के समक्ष दण्डित किये जाने पर वे शर्मिन्दा होते हैं प्रतिक्रिया स्वरूप वे उद्दंडी व ढीठ बन जाते हैं । बालकों से बातचीत तथा उनकी सहमति के द्वारा बनाये गये समूह कक्ष के नियमों की अनुपालना बालक स्वयं की समझ और रुचि से करते हैं, जबकि विपरीत इसके उन पर थोपे गये नियमों अथवा बाहरी दबाव और अरोपित अनुशासन में वे घुटन महसूस करते हैं ।

'दिगन्तर' में बालकों के साथ काम करने के अपने अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि बालक दण्ड या भय के बिना भी अनुशासन सीख सकते हैं, समूह-कक्ष में व्यवस्था बना सकते हैं । 'दिगन्तर' द्वारा संचालित शालाओं में सैद्धांतिक और व्यावहारिक तौर पर किसी भी प्रकार के (शारीरिक अथवा मानसिक) दण्ड और भय का प्रयोग बालकों के साथ काम करते हुए नहीं किया जाता । यहां बालक उन्मुक्त और भय रहित वातावरण में अपने सीखने की गति के साथ अध्ययन करते हैं । शिक्षक और बालक दोनों मिलकर समूह कक्ष की व्यवस्था से संबंधित कुछ नियम तय करते हैं, जिनका पालन इस प्रक्रिया में भागीदार सभी को करना होता है। यदि सामूहिक सहमति से बनाये गये नियमों को कोई बालक अथवा शिक्षक तोड़ता है तो उससे समूह साथियों द्वारा बातचीत की जाती है । बातचीत की इस सतत् प्रक्रिया के चलते बालक स्वत: ही अपने आप को इस व्यवस्था में समायोजित कर लेते हैं । यहां बालक अपने आप को शिक्षक से अधिक जुड़ा हुआ महसूस करते हैं, क्योंकि स्वयं शिक्षक भी उन्हीं नियमों के दायरे में रहता है जो बालक पर लागू होते हैं । यहां बालक शिक्षक की हर बात पर 'क्यों' लगाते हैं । वे उसकी बात को तभी स्वीकार करते हैं जब वह उनकी समझ और तर्क पर खरी उतरती हो, जबकि इसके उलट दण्ड अथवा भययुक्त वातावरण में बालक किसी भी बात को, बिना अपनी समझ बनाये, भय अथवा दबाव के चलते स्वीकार कर लेते हैं जो कि आज के युग में अनुशासनहीनता का एक बड़ा कारण हो सकता है ।

विद्यार्थी जीवन व्यक्ति के व्यक्तिगत निर्माण का काल होता है। इस समय में प्राप्त अनुभूतियों की स्पष्ट छाप भावी जीवन में दिखाई पड़ती है । विद्यार्थी काल में कठोर दण्ड अथवा भय के द्वारा बच्चों के बचपन को कुंठित करने का अर्थ है पूरे समाज को कुंठित करना । शिक्षक व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। घर के बाद सबसे अधिक प्रभाव बच्चे पर विद्यालय का ही पड़ता है और विद्यालय में आजकल छात्रों द्वारा एक-दूसरे के कान खींचवाना, थप्पड़ लगवाना, हाथ ऊपर करके घंटों खड़े रखना, शाला परिसर के चक्कर लगवाना, मुर्गा बना देना, कान पकड़कर उठक-बैठक लगवाना, घुटनों के बल चलवाना तो आम सजाएं हैं, जिन्हें बालक के अभिभावक जानते-बूझते हुए भी गंभीरता से नहीं लेते । उक्त सजाओं से बच्चों का कितना आत्म विश्वास टूटता है, उन्हें कितना मानसिक व शारीरिक कष्ट होता है यह कहने की आवश्यकता नहीं है ।

निष्कर्षत: बालकों को शारीरिक, मानसिक अथवा किसी भी रूप में प्रताड़ित करने पर दोषी अध्यापकों को दण्डित करने का प्रावधान तो होना ही चाहिए परन्तु अधिक आवश्यकता इस दिशा में सामाजिक जागरुकता की है । बच्चों के अभिभावकों तथा हम सब को मिलकर यह चिन्ता करनी होगी कि विद्यालय की चार दीवारी में बच्चों का बचपन सुरक्षित है या नहीं । ◆